स्थापित जुलाई 1988

ISSN No. 0971-796X

प्राकृतविद्या

वर्ष 34, अंक 3

जुलाई-सितम्बर 2021 ई.

नारायण श्रीकृष्ण ने भी दिया क्षमादान

मा भैर्जरे! त्वमुत्तिष्ठ काम एष कृतो हि मे।
याहि त्वं मदनुज्ञातः स्वर्गं सुकृतिनां पदम्॥

—श्रीमद्भागवत, 11/30/39

अर्थ— बाण मारने वाले व्याध जरे को अत्यन्त भयाकुल देखकर क्षमा के अवतार नारायण श्रीकृष्ण ने कहा— हे जरे! भय मत कर उठ! तुमने तो मेरे मन के अनुकूल ही किया है। मेरी अनुज्ञा से तुम पुण्यवानों के लिए प्राप्य स्वर्ग को प्राप्त करो।

UGC Approved Research Journal

ISSN No. 0971-796 ×

प्राकृत-विद्या

पागद-विज्जा

PRAKRIT-VIDYA

Pāgada-Vijjā

प्राकृत, अपभ्रंश आदि प्राच्य भारतीय भाषाओं की हिन्दी तक की विकास-यात्रा दर्शानेवाली समर्पित त्रैमासिकी शोध-पत्रिका

A quarterly journal devoted to researches on the development of Prakrit, Apabhramsha and Ancient Indian Languages upto Hindi Language

वीर निर्वाण संवत् 2547 जुलाई-सितम्बर 2021 वर्ष 34 अंक 3

Veer Nirvan Samvat 2547 July-September 2021 Year 34 Issue 3

आचार्य कुन्दकुन्द समाधि-संवत् 2025

सम्पादक-मण्डल

श्री पुनीत जैन
(नवभारत टाइम्स)

डॉ. रमेश कुमार पाण्डेय
(श्री ला.ब.शा.रा. संस्कृत विश्वविद्यालय)

मानद सम्पादक

प्रो. (डॉ.) वीरसागर जैन
(श्री ला.ब..शा.रा. संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली)

प्रबन्ध सम्पादक

श्री कमलकान्त जैन

प्रकाशक
श्री अनिल कुमार जैन
महामन्त्री
श्री कुन्दकुन्द भारती ट्रस्ट
18-बी, स्पेशल इन्स्टीट्यूशनल एरिया,
नई दिल्ली-110067
फोन : (011) 26564510, 46062192
ई-मेल: kundkundbharti@gmail.com

Publisher
SHRI ANIL KUMAR JAIN
Secretary
Shri Kundkund Bharti Trust
18-B, Special Institutional Area
New Delhi-110067
Phone: (011) 26564510, 46062192
E-mail: kundkundbharti@gmail.com

इस प्रति का मूल्य—बीस रुपया

अनुक्रम

क्र.सं.	शीर्षक	लेखक	पृ.सं.
1.	मंगलाचरण : पंच-परमेष्ठी	मुनिराज योगीन्दु	3
2.	संपादकीय : क्षमावाणी पर्व : एक अनुशीलन	प्रो. वीरसागर जैन	5
3.	उत्तम संयम और महाव्रत	आचार्य विद्यानन्द मुनिराज	15
4.	जैन योग में संयम	आचार्य श्रुतसागर मुनिराज	18
5.	प्रायश्चित्त : एक अनुचिन्तन	डॉ. श्रेयांस कुमार जैन	37
6.	अर्द्धमागधी आगमों में निहित शब्दकोश की प्राचीन परम्परा	डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज	51
7.	जैन जीवनशैली में भावों का महत्त्व	डॉ. शुद्धात्मप्रकाश जैन	59
8.	जैनदर्शन के आलोक में अष्टांग योग	डॉ. जिनेन्द्र जैन	65
9.	चक्रवर्ती का सांस्कृतिक योगदान	समणी मानसप्रज्ञा	76
10.	तत्त्वार्थसूत्र में वर्णित जैन जीवनशैली द्वारा युगीन समस्याओं के समाधान	विकास जैन	85
11.	साहित्य-सत्कार		91
12.	समाचार-दर्शन		93

प्राकृतविद्या के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ

1. आशा है अब आपको 'प्राकृतविद्या' नियमित रूप से मिल रही होगी। यदि अभी तक आप इसके सदस्य न बने हों तो शीघ्र कार्यालय से सम्पर्क करें। इस समय 1500 रुपये में आजीवन सदस्य बनाने की योजना चल रही है।
2. कृपया 'प्राकृतविद्या' के सम्बन्ध में अपने सुझाव, अभिमत आदि भी भेजें।
3. 'प्राकृतविद्या' में प्रकाशनार्थ शोधपूर्ण लेखों का भी हार्दिक स्वागत है।
4. यदि आपके पास प्राकृत भाषा एवं साहित्य के सम्बन्ध में कोई विशेष समाचार हैं तो उन्हें भी भेजने की कृपा करें।
5. यदि आप भगवान महावीर जन्मभूमि वैशाली की यात्रा करना चाहते हैं, उसके विकास में सहयोग करना चाहते हैं अथवा अन्य कोई भी जानकारी चाहते हैं तो भी हमारे कार्यालय से सम्पर्क करें।

कमलकान्त जैन, मो : 9871138842, ईमेल : kundkundbharti@gmail.com

अर्द्धमागधी आगमों में निहित शब्दकोश की प्राचीन परम्परा

—डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज*

प्रस्तावना

जैन-आगम साहित्य की परम्परा में द्वादशांगी का सर्वोत्कृष्ट स्थान है। इसके अन्तर्गत आयारो, सूयगडो आदि अंग आगम परिगणित हैं तथा इसका बारहवाँ अंग है—दृष्टिवाद। चौदह पूर्व इसी के अन्तर्गत हैं। उनमें सत्यप्रवाद और विद्याप्रवाद—ये दो पूर्व शब्दों के अनुशासन से संबंधित हैं। जब तक पूर्वधर रहे, तब तक अन्य शब्दानुशासन की आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई। काल के प्रवाह में दृष्टिवाद की परम्परा लुप्त हो गई। केवल ग्यारह अंग शेष रहे। वे लिपिबद्ध नहीं थे, क्योंकि वह प्रवचनकाल था, अतः सम्पूर्ण ज्ञान प्रवचन के माध्यम से सुरक्षित रखा जाता था। गुरु-शिष्य की परम्परा सुदृढ़ थी। काल व्यतीत होता गया और आगम-युग का अन्त हुआ। आगमों को समझना-समझाना दुरूह-सा होने लगा, अतः व्याख्या-साहित्य लिखा जाने लगा। प्राकृत भाषा प्रचलन में थी, अतः आचार्यों ने प्राकृत भाषा में निर्युक्तियाँ और भाष्य लिखे।

प्राकृतयुग के दीपक की लौ मन्द पड़ने लगी। आगम की प्राकृत-व्याख्याएँ समझना भी कष्टसाध्य हो गया। इसके पश्चात् संस्कृत का युग प्रारम्भ हो रहा था। कतिपय आचार्यों ने प्राकृत और संस्कृत —इन दानों भाषाओं का मिश्रण कर चूर्णि-साहित्य रचा।

उस समय तक कोश की परम्परा का प्रारम्भ नहीं हुआ था। आगमों के वाचन के साथ ही शब्दज्ञान भी करा दिया जाता था। किन्तु ऐसे आचार्यों की परम्परा जब विलुप्त हो गई जो आगमों के वाचन के साथ ही शब्दज्ञान भी करा देते थे, तब कोश या व्याकरण को अलग से सिखाने की आवश्यकता महसूस हुई।

---

*सहायक आचार्य, प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं (राज.)
फोन : 9413037310

जैन-परम्परा में चूर्णिकाल तक शब्द-ज्ञान के लिए अलग कोश-ग्रन्थों का निर्माण नहीं हुआ था। चूर्णिकार व्याख्या के साथ-साथ शिष्य को पर्यायवाची शब्दों का भी ज्ञान करा देते थे। शिष्य को पर्यायवाची शब्दों के लिए अन्यत्र भटकना नहीं पड़ता था। यह एक बात है। दूसरी बात यह है कि जैन आगम अर्धमागधी प्राकृत में लिखे गए हैं। इन सबका लिपिकाल भगवान् महावीर के निर्वाण की दसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है। अर्धमागधी प्राकृत में अठारह देशी भाषाओं का सम्मिश्रण है– यह विद्वत्-सम्मत तथ्य है। इसका प्रमुख कारण यह रहा कि जैन श्रमणों का विहार भारतवर्ष के विभिन्न अंचलों में होता रहा। विभिन्न प्रदेशों के मुमुक्षु जैन श्रमण बने। उनकी अपनी बोली थी। भगवान् महावीर के प्रवचनों की मूल भाषा में उन बोलियों के शब्द मिश्रित होते गए और हजारों-हजारों शब्द आगम-साहित्य में समाहित हो गए। उन स्थलों की व्याख्या करते समय बहुश्रुत आचार्य शब्दों के पर्यायवाची शब्द देते गए। इसका तात्पर्य है कि वे विभिन्न पर्यायवाची शब्दों के माध्यम से विभिन्न बोलियों के शब्द प्रस्तुत कर तद्-तद्-देशीय श्रमणों की जिज्ञासाओं का निरसन करते गए। उन नानादेशीय शब्दों को एकार्थक कहकर संकलन कर दिया जाता था। इसे शब्दकोश के निर्माण का प्रारंभिक रूप माना जा सकता है।

संभवतः यह माना जाता है कि अब तक एक हजार से अधिक शब्दकोश निर्मित हुए हैं। प्रकाश में आने वाला सबसे पहला संस्कृत शब्दकोश है– अमरकोश। इससे पूर्व कोई शब्दकोश प्रकाशित नहीं हुआ था। विभिन्न ग्रन्थों में विभिन्न कोशों के उद्धरण अवश्य प्राप्त होते हैं किन्तु उनका समग्र रूप आज अप्राप्त है। वे कभी प्रचलित रहे होंगे, किन्तु आज वे लुप्तप्रायः है।

जैन-परम्परा में शब्दकोश का मूल स्रोत आगम-साहित्य, निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णि को माना जाता है। भगवतीसूत्र में कोश की उत्पत्ति के विषय में सुन्दर चर्चा प्रस्तुत है। गौतम ने भगवान् महावीर से पूछा– 'भंते! क्या ये नौ पद एकार्थक, नानाघोष और नानाव्यंजन वाले हैं अथवा अनेकार्थक, नानाघोष और नानाव्यंजन वाले हैं? तब भगवान् महावीर ने कहा– 'गौतम! इनमें से प्रथम चार पद एकार्थक, नानाघोष और नानाव्यंजन वाले हैं और शेष पाँच पद अनेकार्थक, नानाघोष और नानाव्यंजन वाले हैं।'

वृत्तिकार आचार्य अभयदेवसूरि ने उक्त विषय में चार विकल्प प्रस्तुत किए हैं–

1. एकार्थक, एक व्यंजन वाले– यथा– क्षीर क्षीर, आदि।
2. एकार्थक, अनेक व्यंजन वाले– यथा– क्षीर, पयः आदि।
3. अनेकार्थक, अनेक व्यंजन वाले–यथा– अर्कक्षीर, गव्यक्षीर, महिषक्षीर आदि।

4. नानार्थक, नाना व्यंजन वाले– यथा– घट, पट, लकुट आदि।

इनमें दूसरा और चौथा विकल्प कोश की उत्पत्ति का मूल माना जाता है।

चलमान चलित, उदीर्यमाण उदीरित, वेद्यमान वेदित और प्रहीयमाण प्रहीण –ये चार पद उत्पाद-पर्याय की अपेक्षा से एकार्थक, नानाघोष और नाना व्यंजन वाले हैं। छिद्यमान छिन्न, भिद्यमान भिन्न, दह्यमान दग्ध, म्रियमाण मृत और निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण –ये पांच पद विनाश की अपेक्षा से नानार्थ, नानाघोष और नाना व्यंजन वाले हैं। इनका नानार्थ इस प्रकार है–

- छिद्यमान छिन्न– यह कर्मों के स्थिति-बंध की अपेक्षा से है। इसमें स्थिति का विनाश है।
- भिद्यमान भिन्न– यह कर्मों के अनुभाग-बंध की अपेक्षा से है। इसमें अनुभाग का विनाश है।
- दह्यमान दग्ध– यह कर्मों के प्रदेश-बंध की अपेक्षा से है। इसमें प्रदेश का विनाश है।
- म्रियमाण मृत– यह कर्मों के आयुष्य-बंध की अपेक्षा से है। इसमें आयुष्य का विनाश है।
- निर्जीर्यमाण निर्जीण– यह कर्मों के आयुष्य-बंध की अपेक्षा से है।

आगमों में निहित एकार्थक शब्दों के कुछ उदाहरण

जीव के अभिवचन– भगवतीसूत्र में जीव शब्द के अनेक अभिवचन एकार्थक शब्द बतलाए गये हैं, जैसे–जीवे (जीव), पाणे (प्राण), भूए (भूत), सत्ते (सत्त्व), विण्णू (विज्ञ), जेया (जेता), आया (आत्मा), रंगण (रंगण), हिंदुए (हिंडुक), पोग्गले (पुद्गल), माणवे (मानव), कत्ता (कर्त्ता), विकत्ता (विकर्त्ता), जंतू (जन्तु), जोणी (योनि), सयंभू (स्वयंभू), ससरीरी (सशरीरी), नायए (नायक), अंतरप्पा (अन्तरात्मा), आदि।[1]

आकाश के अभिवचन– आग्गासे (आकाश), गगणे (गगन), नभे (नभ), समे (सम), विसमे (विषम), खहे (ख), विहे (विह), वीथी (वीथि), विवरे (विवर), अंबरे (अम्बर), छिड्डे (छिद्र), मग्गे (मार्ग), विमुहे (विमुख), आधारे (आधार), वोमे (व्योम), भायणे (भाजन), अंतलिक्खे (अंतरिक्ष), अगमे (अगम), फलिहे (स्फटिक, परिघ), अणंते (अनन्त) आदि।[2]

क्रोध के एकार्थक शब्द– कोहे (क्रोध), कोवे (कोप), रोसे (रोष), दोसे (दोष), अखमा (अक्षमा), संजलणे (संज्वलन), कलहे (कलह), चंडिक्के (चांडिक्य), भंडणे (भंडन), विवादे (विवाद)।[3]

मान के एकार्थक शब्द– माणे (मान), मदे (मद), दप्पे (दर्प), थंभे (स्तम्भ), गव्वे (गर्व), अत्तुक्कोसे (अत्युत्कर्ष), परपरिवाए (परपरिवाद), उक्कोसे (उत्कर्ष), अवक्कोसे (अपकर्ष), उण्णते (उन्नत), उण्णामे (उन्नमन), दुण्णामे (दुर्न्नाम)।[4]

माया के एकार्थक शब्द– माया (माया), उवही (उपधि), नियडी (निकृति), वलए (वलय), गहणे (गहन), णूमे (णूम), कक्के (कल्क), कुरुए (कुरुक), जिम्हे (जिम्ह), किव्विसे (किल्विष), आयरणया (आदरण), गूहणया (गूहन), वंचणया (वंचन), पलिउंचणया (परिकुंचन), सातिजोगे (साचियोग)।[5]

लोभ के एकार्थक शब्द– लोभे (लोभ), इच्छा (इच्छा), मुच्छा (मूर्च्छा), कंखा (कांक्षा), गेही (गृद्धि), तण्हा (तृष्णा), भिज्झा (भिध्या), अभिज्झा (अभिध्या), आसासणया (आश्वासन), पत्थणया (प्रार्थना), लालप्पणया, (लालपन), कामासा (कामाशा), भोगासा (भोगाशा), जीवियासा (जीविताशा), मरणासा (मरणाशा), नंदिरागे (नंदिराग)।[6]

प्रश्नव्याकरण दसवाँ अंग है। इसमें भी अनेक स्थलों पर एकार्थक शब्दों का निर्देश हुआ है। वहाँ प्राणवध (हिंसा) के तीस पर्याय नाम बताए हैं। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

अवीसंभो (अविश्रंभ), अकिच्चं (अकृत्य), घायणा (घातन), मारणा (मारण), वहणा (वध), उद्दवणा (उद्रवण), मच्चू (मृत्यु), असंजमो (असंयम), दुग्गतिप्पवाओ (दुर्गतिप्रपात), पावकोवो (पापकोप), पावलोभो (पापलोभ), वज्जो (वर्ज्य), आदि।[7]

इसी सूत्र में असत्य के तीस नाम गिनाए गये हैं। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं– अलियं (अलीक), सठं (शठ), अणज्जं (अनार्य), कक्कणा (कल्कन), वंचणा (वंचना), साती (साचि), अट्टं (आर्त्त)। अब्भक्खाणं (अभ्याख्यान), किव्विसं (किल्विष), अप्पच्चओ (अप्रत्यय), असमओ (असमय), नूमं (नूम), आदि।[8]

अब्रह्मचर्य के तीस नामों में से कुछ निम्नलिखित हैं–

अबंभं (अब्रह्म), मेहुणं (मैथुन), संकप्पो (संकल्प), दप्पो (दर्प), मोहो (मोह), मणसंखोभो (मनः संक्षोभ), अणिग्गहो (अनिग्रह), विब्भमो (विभ्रम), अधम्मो (अधर्म), वेरं (वैर), रहस्सं (रहस्य), कामगुणो (कामगुण)।[9]

परिग्रह के तीस नामों में से कुछेक ये हैं–

परिग्गहो (परिग्रह), संचयो (संचय), चयो (चय), उवचयो (उपचय), निहाणं (निधान), दव्वसारो (द्रव्यसार), महिच्छा (महेच्छा), कलिकरंडो (कलिकरंड), अणत्थो (अनर्थ), संथवो (संस्तव), अमुत्ती (अमुक्ति), तण्हा (तृष्णा), आसत्ती (आसक्ति), असंतोसो (असंतोष), ।[10]

अहिंसा के साठ पर्यायवाची में से कुछ इस प्रकार हैं–

अहिंसा (अहिंसा), दीवो (दीप), ताणं (त्राण), सरणं (शरण), निव्वाणं (निर्वाण), रती (रति), विरती (विरति), विसुद्धी (विशुद्धि)।[11]

निर्युक्ति साहित्य में निहित एकार्थक शब्द

आगमों के व्याख्या-साहित्य में निर्युक्तियों का प्रथम स्थान है। आचार्य भद्रबाहु द्वितीय ने अनेक आगमों पर निर्युक्तियाँ लिखी। वे पद्यमय हैं। उनकी भाषा प्राकृत है। निर्युक्तियों में अनेक स्थलों पर एकार्थक शब्दों की चर्चा है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

- प्रवचन के एकार्थक शब्द– सुयधम्म (श्रुतधर्म), तित्थ (तीर्थ), मग्गो (मार्ग), पावयणं (प्रावचन), पवयणं (प्रवचन)।[12]
- सूत्र के एकार्थक शब्द– सुत्तं (सूत्र), तंतं (तंत्र), गंथं (ग्रन्थ), पाढो (पाठ), सत्थं (शास्त्र)।[13]
- अनुयोग (अर्थ) के एकार्थक शब्द– अणुयोग (अनुयोग), नियोगो (नियोग), भास (भाषा), विभासा (विभाषा), वत्तियं (वार्तिक)।[14]
- सामायिक शब्द के पर्याय– सामाइयं (सामायिक), समइयं (समयिक), सम्मावाओ (सम्यग्वाद), समास (समास), संखेवो (संक्षेप), अणवज्जं (अनवद्य), परिण्णा (परिज्ञा), पच्चक्खाणे (प्रत्याख्यान)।[15]

सामं (साम), सम (सम), सम्मं (सम्यक्), इगं (इक)।[16] समया (समता), समात्त (सम्यक्त्व), पसत्थ (प्रशस्त), संति (शान्ति), सुविहिअ (सुविहित), सुहं (शुभ), अनिंदं (अनिन्द्य), अदुगुंछिअं (अजुगुप्सित), अगरिहिअं (अगहिंत), अणवज्जं (अनवद्य)।[17]

चूर्णि साहित्य में निहित एकार्थक शब्द

जैन आगमों के व्याख्या-साहित्य में चूर्णियों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। अनेक आगमों पर चूर्णियाँ लिखी गई। ये सब संस्कृत और प्राकृत में लिखी गईं। इनका रचनाकाल विक्रम की पांचवीं से सातवीं शताब्दी हैं। जिनदास महत्तर चूर्णिकारों में अग्रणी हैं। उनकी अनेक चूर्णियाँ आज उपलब्ध हैं। दशवैकालिकसूत्र पर एक प्राचीन चूर्णि जैसलमेर भंडार में मुनि पुण्यविजयजी को प्राप्त हुई थी। वह अगस्त्यसिंह स्थविर कृत है और उसका काल विक्रम की तीसरी से पाँचवीं शताब्दी का अन्तराल माना जाता है। वह कुछ समय पूर्व ही प्रकाशित हुई है। इन चूर्णियों में अनेक शब्दों के पर्याय-नाम उल्लिखित हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

- मग्गतोत्ति वा पिट्ठउत्ति वा।[18]

- अप्पियववहारियंति वा विसेसादिट्ठंति वा एगट्ठा।[19]
- माणंति वा परिच्छेदोत्ति वा गहणपगारोत्ति वा एगट्ठा।[20]
- अभिप्पायोत्ति वा बुद्धित्ति वा एगट्ठं।[21]
- उज्जोतं करेतीति प्रकटनं करोतीति प्रकाशयतीत्यर्थः।[22]
- खमत्ति वा तितिक्खत्ति वा कोहनिरोहति वा।[23]
- आयारो (आचार), आचाले (आचाल),
- आगालो (आगाल), आगारो (आगार),
- आसासो (आश्वास)।[24]
- सातंति वा सुहंति वा अभयन्ति वा परिणिव्वाणंति वा एगट्ठा।[25]
- असातंति वा अपरिणिव्वायंति वा महब्भयंति वा एगट्ठा।[26]
- तसंतित्ति वा उव्वियंति वा संकुयंति वा बीभिंति वा एगट्ठा।[27]
- वग्घो वक्खोडो बंधणंति वा एगट्ठा।[28]
- विजयो विचारणा मग्गणा एगट्ठा।[29]
- मूलं प्रतिष्ठा आधारो वा एगट्ठा।[30]
- सुरेत्ति वा वीरेत्ति वा सत्तिएत्ति वा एगट्ठा।[31]
- समणेत्ति वा माहणेत्ति वा मुणित्त वा एगट्ठा।[32]
- संगोत्ति वा विग्थोत्ति वा वक्खोडित्ति वा एगट्ठा।[33]
- अज्झत्थितं ऊहितं गुणतं चिंतितंति एगट्ठा।[34]
- फुसिते दुज्झोसएत्ति वा एगट्ठा।[35]
- आणत्ति वा नाणत्ति वा पडिलेहित्ति वा एगट्ठा।[36]
- कंखंति पत्थंति गच्छंति एगट्ठा।[37]
- वसित्तु वा पालित्तु वा एगट्ठा।[38]
- पज्जवोत्ति वा भेदोत्ति वा गुणोत्ति वा एगट्ठा।[39]
- णाणंति वा संवेदणंति वा अधिगमोत्ति वा चेतणंति वा भावत्ति वा एते सद्दा एगट्ठा।[40]
- परिगिज्झंति वा पत्थणंति वा गिद्धित्ति वा अभिलासोत्ति वा लेप्पत्ति वा करवंति वा एगट्ठा।[41]
- विउस्सग्गोत्ति वा विवेगोत्ति वा अधिकिरणंति वा छड्डणंति वा वोसिरणंति वा एगट्ठा।[42]
- चिक्कणंति वा दारुणंति वा एगट्ठा।[43]
- गुणोत्ति वा पज्जतोत्ति वा एगट्ठा।[44]
- णामंति वा ठाणंति वा भेदोत्ति वा एगट्ठा।[45]

- मलंति वा पावंति वा एगट्ठा।[46]
- मुणित्ति वा नाणित्ति वा एगट्ठा।[47]
- लंगलंति वा हलंति वा एगट्ठा।[48]
- कित्ति-वण्ण-सद्द-सिलोगट्ठया एगट्ठा।[49]

उपसंहार :

उपर्युक्त उदाहरण शब्दकोश के निर्माण का प्रारंभिक रूप माना जा सकता हैं। मूल आगम और उनके व्याख्या-ग्रन्थ इन उदाहरणों से भरे पड़े हैं। इस एकार्थक शब्द-संकलना से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये अनेक भाषाओं में व्यवहृत देशीय शब्द, शिष्यों के लिए शब्दकोश का कार्य करते थे और विभिन्न प्रान्तों के शिष्यों के लिए भगवद्वाणी को समझने में सहयोगी बनते थे।

संदर्भ-ग्रन्थ

1. भगवई, 20/17
2. भगवई, 20/16
3. भगवई, 12/103
4. भगवई, 12/104
5. भगवई, 12/105
6. भगवई, 12/106
7. पण्हावागरणाइं, 1/3
8. पण्हावागरणाइं, 2/2
9. पण्हावागरणाइं, 4/2
10. पण्हावागरणाइं, 5/2
11. पण्हावागरणाइं, 6/3
12. सुयधम्म तित्थ मग्गो, पावयणं च पवयणं एगट्ठा।
    सुत्तं तंतं गंथो, पाढो सत्थं च एगट्ठा।।
    –(आवश्यक निर्युक्ति, गाथा 130)
13. आवश्यक चूर्णि, पृ. 108
14. अणुओगो य नियोगो, भास विभासा य वत्तियं चेव। अणुओगस्स य एए, नामा एगट्ठिआ पंच।।
    –(आवश्यक निर्युक्ति, गाथा 131 एवं आवश्यक चूर्णि पृ. 108)
15. समाइयं समइयं सम्मावाओ समास संखेवो। अणवज्जं च परिण्णा पच्चक्खाणे य ते अट्ठ।।
    –(आवश्यक निर्युक्ति, गाथा 864)
16. सामं समं च सम्मं इगमवि सामाइ-अस्स एगट्ठा।
    –(आवश्यक निर्युक्ति, गाथा 1043)
17. समया सम्मत्त पसत्थ संति सुविहिअ सुहं अनिदं च। अदुगुंछिअमगरिहिअं अणवज्जमिमेऽवि एगट्ठा।।
    –(आवश्यक निर्युक्ति, गाथा 104 6)
18. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 56
19. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 376
20. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 377
21. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 543
22. आवश्यकचूर्णि, उत्तरभाग, पृ. 3
23. आवश्यकचूर्णि, उत्तरभाग, पृ. 116
24. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 2,3
25. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 36
26. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 36
27. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 36
28. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 41
29. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 43
30. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 44

31. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 83
32. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 93
33. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 170
34. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 171
35. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 173
36. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 198
37. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 205
38. आवश्यकचूर्णि, पूर्वभाग, पृ. 209
39. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 4
40. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 10
41. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 30
42. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 37
43. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 232
44. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 266
45. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 353
46. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 294
47. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 324
48. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 254
49. दशवैकालिकचूर्णि (जिनदास), पृ. 328

❖❖

निर्विवाद मंगलाचरण

''यस्य ज्ञानदयासिन्धोरगाधस्यानघा गुणा:।
सेव्यतामक्षयो धीरा: स श्रिये चामृताय च॥'' –(अमरकोश 1/1)

अर्थ– जिसके अनन्तज्ञान, अनन्त दया आदि अनघ—निष्पाप गुण हैं, हे धीर पुरुषो! वह परमात्मा श्री और अमृतत्व की प्राप्ति के लिए सेवनीय है।

''यत: सर्वाणि भूतानि प्रतिभान्ति स्थितानि च।
यत्रैवोपशमं यान्ति तस्मै सत्यात्मने नम:॥'' –(योगवासिष्ठ)

अर्थ– जिससे सारे भूतसर्ग (पर्यायें) प्रतिभात (प्रतीत) होते हैं, स्थित हैं तथा जिसमें लीन हो जाते हैं उस सत्य (सत्स्वरूप) परमात्मा को नमस्कार है।

''सर्वव्याप्यैकचिद्रूपस्वरूपाय परात्मने।
स्वोपलब्धिप्रसिद्धाय ज्ञानानन्दात्मने नम:॥''

–(अमृतचन्द्रसूरि, प्रवचनसार टीका)

अर्थ– जो ज्ञानरूपी प्रकाश से सर्वव्यापी एक मात्र चैतन्यस्वरूप परमात्मा है तथा स्व की उपलब्धि से प्रसिद्ध है, उस ज्ञानानन्दात्मा को नमस्कार है।

''दिक्कालाद्यनवच्छिन्नान्तचिन्मात्रमूर्तये ।
स्वानुभूत्येकमानाय नम: शान्ताय तेजसे॥''

–(भर्तृहरि, नीतिशतक 1)

अर्थ– जो दिक्, काल आदि से अनवच्छिन्न (अव्याप्य, अस्पृष्ट, अबाध) है, अनन्त है, चिन्मात्र स्वरूप है तथा स्वानुभवसंवेद्य है, (जिसे स्वानुभूति से ही जाना जा सकता है, प्रवचन से नहीं) उस शान्त तेजःस्वरूप को नमस्कार है।